PEER REVIEWED JOURNAL
© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 07 , Issue : 10 | November - December 2020

भारतीय साहित्य में निर्गुण काव्य

पिंकी देवी, शोधार्थी
एम.ए. (हिन्दी), नेट, हिसार (हरियाणा)

शोध आलेख सार–

निर्गुण काव्य का भारतीय साहित्य में विषेष स्थान है। निर्गुण कवियों का उद्देष्य कविता करना न होकर भारतीय समाज में फैली हुई कुरीतियों पर प्रहार करना था। ये ईष्वर उपासना में बाह्य आडम्बरों का विरोध करते थे। इन कवियों में कबीर, नानक, दादूदयाल, मलूकदास आदि के नाम लिये जा सकते हैं। इन कवियों पर आरोप लगे कि ये वैयक्तिक कल्याण को समाज–कल्याण से अधिक महत्त्व देते हैं और ये कवि पलायनवादी प्रवृति के रहे हैं। इन आरोपों में वैयक्तिक कल्याण की बात करें तो इन निर्गुण कवियों ने समाज–कल्याण के लिए ही प्रयत्न किये। उन्होंने मूर्तिपूजा, सामाजिक कुरीतियों, आडम्बरों आदि पर अपने काव्य के माध्यम से प्रहार किया है। ये कवि संन्यासी न होकर गृहस्थ जीवन व्यतीत करते थे। सामाजिक व्यक्ति होने के कारण ये समाज की परिस्थितियों व बुराइयों को अच्छी तरह जानते थे। इन्होंने समाज की पीड़ा, दर्द, घुटन व कठिनाइयों को सहन व महसूस किया था। इन कवियों ने समाज सुधारक की भूमिका निभाई।

भारतीय साहित्य में निर्गुण काव्य–

निर्गुण काव्य अपनी विषेषताओं के कारण हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मानवतावादी तत्व का जितना स्पष्ट व सुन्दर चित्रण निर्गुण साहित्य में हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। यह साहित्य सरल, सरस व स्वाभाविकता में अद्वितीय है।

'निर्गुण' शब्द संस्कृत भाषा का है, जिसका अर्थ गुण–रहित, स्वरूप–रहित, अर्थात विषिष्टता–रहित होता है। अब प्रष्न उठता है कि सर्वोच्च सत्ता ब्रह्म को निर्गुण कहा जाए या सगुण। निर्गुण काव्य लिखने वाले कवियों ने अपने से पहले की विभिन्न साधनाओं में समन्वय लाने का प्रयास किया। इन कवियों की काव्य रचना का मुख्य उद्देष्य वर्तमान समाज में प्रचलित बुराइयों, कुरीतियों, ब्राह्य आडम्बरों को दूर करके अच्छे सामाजिक आदर्षो का निर्माण करना था। इन कवियों का मुख्य उद्देष्य जनता को कुरीतियों के अन्धकार से निकालकर अच्छाई रूपी उजाले के दर्षन कराना था। डॉ॰ त्रिलोकी नारायण दीक्षित के शब्दों में– ''इनके साहित्य का केन्द्र बिन्दु है, जनता।''[1] निर्गुण कवियों ने अपने साहित्य में जनता को सर्वोपरि माना है। इन कवियों ने उपनिषदों के गूढ़ रहस्यों को भी जनता के लिए सरल व सुगम बनाकर अभिव्यक्त किया है।

सुदर्षन मजीठिया के विचारनुसार– ''उनकी वाणी में विष्व कल्याण का संदेष था। ये विचार किसी के लिए भी लागू हो सकते थे। जिस समय हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अपने संकुचित विचारों को लेकर एक–दूसरे से लड़ रहे थे, उस समय व्यापक दृष्टिकोण का विचार इन्होंने दिया। उस समय देष में फैली हुई विभिन्न विचारधाराओं का निचोड़ हम इन संतों की वाणी में पाते हैं।''[2]

निर्गुण काव्यधारा के कवियों में कबीर, नामदेव, रैदास, मलूकदास, रज्जब, दादू दयाल, जयदेवा आदि प्रमुख है। इन कवियों को सन्त कवि भी कहा जाता है। निर्गुण काव्यधारा हिन्दी साहित्य में अपना एक विषेष स्थान रखती है। इन कवियों ने ईष्वर को निराकार, निर्गुण, परब्रह्म बताया है। इन्होंने काव्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किया है। इन्होंने समाज सुधार की भूमिका निभाई। निर्गुण कवि समाज में व्याप्त कुरीतियों, भ्रान्तियों को दूर करने वाले मार्गदर्षक बनें।

निर्गुण कवियों पर आरोप व खण्डन–

(1) वैयक्तिक कल्याण का आरोप–

निर्गुण कवियों पर आरोप लगता है कि इन कवियों को व्यक्तिगत–कल्याण की चिन्ता समाज–कल्याण से ज्यादा थी। इन कवियों को सामाजिक चिन्ता से पहले वैयक्तिक कल्याण की चिन्ता थी। इन आरोपों का यदि निष्पक्ष परीक्षण करे तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आरोप लगाने वालो ने शायद साहित्य का विस्तृत एवं गहन अध्ययन नहीं किया है। निर्गुण कवियों ने व्यक्तिगत रूप से मनुष्य को सुधारने का जो प्रयास किया, उनमें उनका उद्देष्य किसी एक व्यक्ति के सुधार का न होकर, सारे समाज को पतन के रास्ते से बचाना, पतन को उत्थान में बदलना और एक आदर्ष व सुचारू ढांचे में ढालना है। व्यक्तिगत रूप में जिस शुद्ध आचरण की अपेक्षा इन कवियों ने प्रस्तुत की, उसका व्यापार मानव समाज के अन्दर ही चलता है। मनुष्य के गुणों का विस्तार समाज के अन्दर ही सम्भव है। मनुष्य की सज्जनता व दुर्जनता दूसरे प्राणियों के साथ उसके सम्बन्धों में अपना निर्वाह करें तो उसका कोई काम सज्जनता या दुर्बलता की कोटि में नहीं आयेगा।[3]

(2) पलायनवादिता का आरोप–

निर्गुण कवियों पर दूसरा आरोप यह लगता है कि ये कवि समाज में तटस्थ व पलायनवादी थे। इन्होंने केवल अध्यात्म, मुक्ति व माया जैसे असामाजिक तत्वों पर ही जोर दिया। इन आरोपों के खण्डन के लिए निर्गुण साहित्य का गहन व विषुद्ध अध्ययन जरूरी है। यह सच है कि ये कवि विरक्त थे परन्तु अपने चारों ओर फैले पाखण्डपूर्ण वातावरण से इनकी ज्ञानात्मक चेतना अलग नहीं रही। ये कवि विरक्त का भेष ग्रहण करके भी समाज सुधार में लगे रहे। इनका कवि कर्म का लक्ष्य जन–कल्याण व समाज में सुधार लाना था। एक जगह पर कबीर ने कहा है–

या जग में केहि–केहि समुझावो।

इक दुइ होंय उन्हें समझावों, सबनि भुलाना पेट के धन्धा।

पानी के घोड़ा पवन असवरवा, ढरकि परै जस ओस के बुन्दा।।[4]

इसमें पानी के घोड़ा, पवन असवार और औस की बूंद के समान इस अस्थिर संसार में संलग्न लोगों के रोग–निदान का प्रयास कवियों द्वारा किया गया हैं। इन्होंने सामाजिक बुराइयों पर अपनी वाणी से कठोर प्रहार किया और सामाजिक बुराइयों का डटकर सामना किया। इन कवियों के समय योग का प्रचार व प्रसार अपनी उच्च सीमा पर था। जो लोग योग को धारण करते थे, वे लोग समाज से बाहर जंगलों में रहकर धूनी रमाते थे और तपस्या करते थे। इसी को ही पलायन कह दिया गया। इनके अनुसार यह संसार की कठिनाइयों से भागने की बात थी। ऐसे लोगों को समझाते हुए भी कबीर ने कहा है–

अवधू भूले को घर लावै,सो जन हमको भावै।
घर में जोग,भोग घर ही में, घर तज बन नहिं जावै।
घर में जुक्त, मुक्त घर ही में, जो गुरू अलख लखावै।[5]

ये कवि कहते थे कि जब घर पर रहकर ही मुक्ति मिल सकती है तो घर त्यागने की क्या आवष्यकता है? परलोक जैसे शब्द को ये नहीं मानते थे। ये घर में रहकर ही अपने मन के अन्दर ईष्वर को खोजने की प्रेरणा देते थे। निर्गुण कवियों ने व्यवसाय करते हुए ईष्वर की उपासना की है। नामदेव ने आध्यात्मिक वर्णन के लिए अपनी व्यवसायिक उपमाओं का ही प्रयोग किया है, जैसे–

''सोने की सुई रूपे का धागा, नामे कांचित हरि सूं लागा।''

कबीर स्वयं की कर्मठ त्यागी थे। इन्होंने ईष्वर की उपासना के साथ–साथ ताना बुनना जारी रखा। गृहस्थ जीवन में भी विरक्तों की तरह रहना ही सबसे बड़ा पवित्र कार्य है। कबीर का कहना है–

''घर में बसंत, वस्तु भी घर है, घर ही वस्तु मिलावै।
कहे कबीर सुनौ हो अवधू, ज्यों का त्यों ठहरावै। ''

विरक्ति का प्रयोग इन कवियों ने कहीं भी प्रचलित अर्थो में नहीं किया। केवल धूनी रमाकर जंगल में चले जाने से क्या बनता है? सही वैराग्य तो तब माना जाएगा, जब मनुष्य अपने मन के बुरे विकारों और कुवासनाओं को दूर करेगा। वन में रहना उतना आवष्यक नहीं है जितना आवष्यक मन का विकारों रहित होना है। सच्चे वैरागी की कसौटी सादगी व सदाचरण है। इसलिए सन्तों ने प्रवृत्ति तथा निवृत्ति मार्गो के मध्यवर्ती सहज मार्ग को अपनाया है और विष्व कल्याण में निरत रहते हुए भूतल पर स्वर्ग लाने का स्वप्न देखा है।''[7]

इन कवियों ने माना है कि पलायन का मार्ग कायरों का मार्ग है। ये कवि समाज के सामने रहकर उसे निरपेक्ष भाव से देखकर आगे बढ़ना चाहते थे। इनका मानना था कि वास्तविक सुख न विरक्ति में और न ही गृहस्थ में है, बल्कि दोनों को समान रूप से लेने वाला ही सुखी हो सकता है।

निष्कर्ष–

संक्षेप में कहा जा सकता है कि इनका धार्मिक चिन्तन संसार को कोलाहल से दूर एकान्त व कृत्रिम सुरक्षा और शान्ति की अपेक्षा नहीं करता है। ये कवि संसार की प्रत्येक वस्तु को नष्वर, परिवर्तनषील और क्षणभंगुर समझते हैं। ये कवि अपने उपदेष से संसारी बनने की प्रेरणा देते हैं और साथ ही, विरक्त होने का भी ताना बुनते हैं।

डॉ पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने लिखा है– 'निर्गुण भक्त की साधना का स्वरूप व्यक्तिगत है, तो भी अपने आध्यात्मिक विकास के लिए ये जंगलों में नहीं जाते बल्कि अपनी साधना का क्षेत्र सामाजिक चेष्टाओं को ही बनाते हैं।''[8]

अपने आदर्षो को इन्होंने निर्भीक होकर प्रस्तुत किया है। इसके लिए भले ही उन्हें विरोध सहन करना पड़ा हो। ये कवि न तो वैयक्तिक थे और न ही पलायनवादी, बल्कि सामाजिक थे। इन्होंने बुराइयों, आडम्बरों का डटकर विरोध किया। इन कवियों का युग आज के युग की तरह प्रजातंत्र या गणतंत्र नहीं था। ये दलित–समाज में पैदा हुए थे। ऐसी निर्धन व दीनहीन स्थिति में भी इन्होंने समाज को सुधारने का प्रयास किया।

संदर्भ सूची–

1. सन्तदर्षन, पृष्ठ सं॰– 5.4
2. डॉ॰ सुदर्षन सिंह मजीठिया, सन्त साहित्य, पृ.सं.– 7
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि भाग प्रथम, पृ. सं.–46
4. कबीर, सन्त वाणी संग्रह, भाग–2, पृ.सं.–25
5. डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृ.सं.– 26
6. वियोगी हरि, सन्त सुधार–सार, खण्ड–1, पृ.सं. 45–46
7. आचार्य परषुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, पृ. सं.– 15
8. हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय, पृं.सं.–319